जैन विद्याओंमें शोधके क्षितिज
रसायन और भौतिकी

नन्दलाल जैन, महिला महाविद्यालय, रीवा, (म० प्र०)

रसायन-विज्ञान

रसायनके अन्तर्गत जड़ और जीव जगतके विभिन्न पदार्थों और उनके गुणधर्मके विषयमें वर्णन किया जाता है। विभिन्न समयमें लिखे गये जैन आगमिक एवं व्याख्याग्रन्थोंमें रसायनसे सम्बन्धित अनेक प्रकरण स्फुट रूपसे पाये जाते हैं। इनके विषयमें लेखकोंने शोध लेख और समीक्षा लेख तथा पुस्तिकायें लिखी हैं। इनमेंसे कुन्द-कुन्द, उमास्वाति, भगवती, अनुयोगद्वार, प्रज्ञापना आदि ग्रन्थों और उनकी टीकाओंमें वर्णित रासायनिक तथ्योंका संकलन, समीक्षण एवं तुलनात्मक निरूपण किया गया है। इनका मुख्य विषय द्रव्य और पदार्थकी परिमाण, भेद-प्रभेद, परमाणुवाद और बन्धप्रक्रिया है। एक ओर शास्त्री, न्यायाचार्य और मेहताके समान शास्त्रीय विद्वानोंने अपने विवरणोंमें शास्त्रीय तथ्योंका संकलन किया है, वहीं दूसरी ओर सिकदरने अपने शोध ग्रन्थ तथा शोध लेखमें विविध भारतीय दर्शनोंके परिपेक्ष्यमें जैन पदार्थवाद तथा परमाणुवादका विवेचन किया है। यद्यपि द्रव्य और पदार्थकी उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यात्मक परिमाणमें विभिन्न लेखकोंके विवरण समान हैं, फिर भी जैनने द्रव्यके सामान्य और विशेष गुणोंके आला-पद्धतिके विवरणकी ओर ध्यान आकृष्ट करते हुए बताया है कि यह परिभाषा अधिक व्यापक और समीचीन लगती है। बाँटियाने[5] पदार्थ परिभाषाके अतिरिक्त जैनागम वर्णित परमाणु और पुद्गलके समस्त गुणोंका संकलन कर नवीन शोधकोंके लिए उत्तम कार्य किया है। जवेरी[4] और जैनने[8] आगमिक परमाणु और आधुनिक परमाणुकी तुलनात्मक समीक्षा प्रस्तुत करते हुए बताया है कि जैनागम वर्णित परमाणुके गुण आधुनिक परमाणुकी तुलनामें परमाणु घटकोंके लिए अधिक सार्थक प्रतीत होते हैं। इसीलिये उन्होंने वैज्ञानिक मूलभूत कणोंको जैनागमी परमाणुके समकक्ष प्रदर्शित करनेका यत्न किया है। मुनिश्री नगराज[3] भी इसी पक्षके प्रतीत होते हैं। इसके विपरीत जैन[1] और सिंहने[10] इस परमाणुवादकी सूक्ष्मतासे परीक्षा कर यह प्रदर्शित किया है कि आगमोक्त परमाणु वर्तमान परमाणुके समकक्ष ही माना जाना चाहिये। इलेक्ट्रान, प्रोटान या क्वार्ककणोंको आगमोक्त परमाणुके समकक्ष मानने पर निम्न गुणोंकी सही व्याख्या नहीं की जा सकती :

(१) इलेक्ट्रान आदि मूलकणोंको ऊर्जामय पुद्गल मानने पर भी चूँकि ऊर्जा भी कण-मय होती है, ठोस और एक प्रदेशी होती है, अतः उसमें संकोच-विस्तारके गुणोंकी व्याख्या नही की जा सकती। ये गुण खोखले परमाणुओंमें ही पाये जा सकते हैं।

(२) सामान्यतः आधुनिक अनेक मूलकणोंको सम्यक् परिभाषित कर लिया गया है। इससे पता चलता है कि मूलकणोंके गुण (आवेश, द्रव्यमान आदि) भिन्न-भिन्न होते हैं। यही नहीं, न्यूटान, क्वार्क आदि कण इलेक्ट्रानकी तुलनामें ७००-२००० गुने भारी होते हैं। इस प्रकार आगमोक्त पंचगुणी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(चतुस्पर्शी) या सप्तगुणी (अष्टस्पर्शी) परमाणुओंकी समानता और अनंतताका सही व्याख्यान नहीं होता। यदि आगमोक्त परमाणुओंको इलेक्ट्रान, पोजिट्रानके समकक्ष भी माना जाय, तो भी प्रोटान या न्यट्रानके निर्माणको एक तीसरे पर पर्याप्त भारी मूलकणी परमाणुको माने बिना नहीं समझाया जा सकता। इस प्रकार आगमोक्त परमाणु शब्दसे कमसे कम तीन विभिन्न प्रकारके कणोंका बोध होता है जो एक दूसरेसे भिन्न होते हैं। तीन कण परमाणुओंकी जातिगत अनन्तताको सिद्ध नहीं करते।

(३) तत्त्वार्थसूत्रमें परमाणुओंकी बंधप्रक्रियाके तीन मुख्य सूत्र दिये हैं। जैन[६] ने अपनी व्याख्यामें बताया है कि आगमोक्त परमाणुओंको यदि इलेक्ट्रान आदिके समकक्ष माना जाता है, तो उनकी सही व्याख्या नहीं की जा सकती। फिर भी, वे परमाणुकी अविभागिताको मूल मानते हुये इस समरूपता पर ही बल देते हैं। इसके विपर्यासमें, यदि आगमोक्त परमाणुको वर्तमान परमाणुके समकक्ष माना जाय, तो यह प्रक्रिया सहजमें समझी जा सकती है। इसके उन्होंने अनेक उदाहरण दिये हैं।

आगमोक्त परमाणुओंको वर्तमान परमाणुओंके समकक्ष मानने पर उनके खोखलेपन, संकोचविस्तार, विविधता तथा बन्धप्रक्रियाकी न केवल सरलता वहीं प्रकट होती है, अपितु यह भी अचरज होता है कि उपकरण-विहीन पुरातन युगमें भी हमारे जैन मनीषी कितने गंभीर एवं तीक्ष्ण विचारक रहे हैं। यही नहीं, आगमोंमें अनेक स्थलों पर परमाणुओंके सम्बन्धमें परिमाणात्मक विवरण प्राप्त होते हैं, वे भी आगमोक्त परमाणुओंकी इस समकक्षताको पुष्ट करते हैं। उदाहरणार्थ तिलोयपण्णत्तिमें लम्बाईके यूनिटोंकी चर्चा करते हुये उवसन्नासन्नसे लेकर यव और अंगुल यूनिटोंके मान बताये हैं। दत्त और सिंहके अनुसार अंगुलका मान यदि ०-७७ इंच या १-६५ सेमी० माना जाय, तो उवसन्नासन्न यूनिटका परिमाण १०-११सेमी० आता है। इस आधार पर अनुयोगद्वार और जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिके व्यावहारिक परमाणुका मान ०.८ × १०—८ सेमी० होगा जो आधुनिक सामान्य परमाणुके व्यासके बराबर ही है। इलेक्ट्रान या न्यूक्लिसका व्यास १० – १३ सेमी० के लगभग होता है। यहाँ भी यह ध्यानमें रखना चाहिये कि विभिन्न ग्रन्थोंमें क्षेत्र-मानोंकी यूनिटोंमें कुछ अन्तर भी पाया गया है। इस साइजके अतिरिक्त, परमाणुओंकी गति, स्पर्श, प्रति-घात, कम्पन आदिके सम्बन्धित विवरण भी वर्तमान परमाणुकी समकक्षतामें घटित हो जाते हैं। जवेरी और अन्य लेखकोंने आगमोक्त परमाणुओंको द्रव्यमान या संहतिविहीन कणोंके समकक्ष माननेका सुझाव दिया है। लेकिन अबतक संहतिविहीन कण ऊर्जाएँ ही रही हैं और आईस्टीनने ऊर्जाओंकी कणमयता प्रमाणित की है। क्वान्टम सिद्धान्त भी इसकी पुष्टि करता है कि सभी ऊर्जाओं एवं सूक्ष्मकणोंके व्यवहार तरंगणी प्रकृतिके आधार पर ही समझाये जा सकते हैं। इस प्रकार, आगमोक्त परमाणु पदसे वाच्य अर्थमें समीक्षक काफी खींचतान करते प्रतीत होते हैं। वस्तुतः अविभागी, अगुरुलघु और इन्द्रिय-अग्राह्य पदको बहुत अधिक पूर्वाग्रहपूर्वक नहीं लेना चाहिये। हाँ, यह अवश्य स्वीकार करना होगा कि परमाणुको सूक्ष्म और व्यावहारिक परमाणुके रूपमें मान्यता प्रदान कर संभवतः पद्मनंदिने उसी प्रकार शास्त्रीय मर्यादा स्थिर रखी जैसे भट्ट अकलंकने प्रत्यक्ष ज्ञानको लौकिक और मुख्य प्रत्यक्षके रूपसे विभाजित कर अपने समयमें एक बड़े विवादको चतुरतापूर्वक सुलझाया था। वस्तुतः सामान्य जन न तो मुख्य प्रत्यक्षमें रुचि रखता है और न ही सूक्ष्म परमाणुमें। उनकी परिभाषा शास्त्रीय और अकल्पनीय भी बनी रहे, तो कोई आपत्ति नहीं है। इस प्रकार यह कहना चाहिये कि आधुनिक वैज्ञानिक परमाणु आगमोक्त व्यावहारिक परमाणुके समकक्ष होता है। अतः इनके अन्य गुणोंका वर्णन भी इसी आधार पर समीक्षित किया जाना चाहिये। सिकदर और जैनने आगमोक्त परमाणुवादकी अन्य भारतीय तथा प्राचीन परमाणुवादसे तुलना कर यह प्रमाणित

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

किया है कि समसामयिक मान्यताओंकी दृष्टिसे जैन परमाणुवाद आधुनिक दृष्टिसे भी अधिक समीचीन प्रमाणित होता है।

सूक्ष्म और व्यावहारिक—दोनों ही प्रकारके परमाणु (चाहे ऊर्जा रूप हों या सूक्ष्मकण रूपमें हों) आगमोंमें पौद्गलिक बताये गये हैं। अतः उनमें रूप, रस, गन्ध, स्पर्श और संस्थान—ये पाँच गुण होते है। आगमोंमें परमाणुओंका विभाजन इसी आधार पर किया गया है और उनकी संख्या २०० ही मानी गई है। वस्तुतः रूप-रसादिके आधारपर परमाणुओंका यह वर्गीकरण उचित प्रतीत नहीं होता, क्योंकि यद्यपि रूप, रस आदि मुख्यतः २० प्रकारके होते हैं, पर उनके अवान्तर भेद इतने अधिक हैं कि इस आधार पर वर्गीकरणकी कोई विशेष महत्ता नहीं रह जाती और परमाणुओंको अनन्त प्रकारका कहनेके अतिरिक्त अन्य विकल्प नहीं है। वस्तुतः परमाणुओंका वर्गीकरण उनकी आन्तरिक संचरनाके आधारपर ही करना चाहिये। यह दृष्टि यन्त्रयुगीन सूक्ष्मतर निरीक्षण क्षमताको प्रकट करती है।

यदि हम व्यवहार परमाणुकी धारणाको संबल देते हैं, तो यह कहा जा सकता है कि ये सूक्ष्म परमाणुओंसे निर्मित होते हैं। पर ये स्कन्ध नहीं कहलायेंगे क्योंकि ये परमाणु विस्तारकी सीमामें ही रहते हैं। इन सूक्ष्म परमाणुओंको मूलभूत कणों या ऊर्जाके रूपमें माना जा सकता है। पर इन कणोंमें भी आवेश, द्रव्यमान आदिके कारण भिन्नताएँ हैं। इनकी संख्या दिनोंदिन बढ़ रही है। यह उल्लेख सही नहीं लगता कि सभी परमाणुओंका द्रव्यमान बराबर होता है। द्रव्यमान-विहीन चतुस्पर्शी सूक्ष्म परमाणुओं की प्रकृतिकी व्याख्या अभी पूर्णतः स्पष्ट नहीं है। इस प्रकार आगमोक्त परमाणुवादको निम्न प्रकार निरूपित किया जा सकता है :

सूक्ष्म परमाणु ——→ व्यवहार परमाणु ——→ स्कन्ध ——→ महास्कन्ध

इन तथ्यों पर तुलनात्मक समीक्षकोंको विचार करना चाहिये।

शास्त्रोंमें परमाणु-सम्बन्धी वैचारिक चर्चा जितनी ही सूक्ष्मतासे वर्णित है, स्कन्ध-विषयक चर्चा उतनी ही स्थूलतासे वर्णित है। सामान्यतः स्कन्धोंको सभी समीक्षक आधुनिक अणुके समकक्ष मानते हैं। इनके दो रूप स्पष्ट हैं—चाक्षुष और अचाक्षुण। इनके निर्माणकी प्रक्रियासे सम्बन्धित आगम सूत्रोंकी व्याख्यामें कुछ अन्तर पाया जाता है और श्वेताम्बर-परम्पराकी व्याख्या आधुनिक दृष्टिसे अधिक वैज्ञानिक प्रतीत होती है। जैनने बताया है कि उमास्वातिके परमाणुबन्ध-सम्बन्धी तीन सूत्र समुचित अर्थ करने पर आधुनिक तीन प्रकारकी बन्धकताको निरूपित करते हैं यदि आगमोक्त परमाणुओंको वैज्ञानिक परमाणुओंके समकक्ष या व्यवहार परमाणु माना जाय। $NaCl$ व H_2 के अणुओंके निर्माण क्रमशः **स्निग्धरुक्षत्वात् बंधः** तथा **गुणसाम्ये सदृशानां**को निरूपित करते हैं। SO_2 या HNO_3 के अणुओंके निर्माण **द्व्यधिकादि गुणानां तु**के उदाहरण हैं।

जैनने सूक्ष्म परमाणुओंके बन्धकी जटिलताको प्रतिपादित करते हुए उमास्वातिके बंध निर्देशक सूत्रोंके अर्थमें भ्रान्ति ही उत्पन्न की है। वस्तुतः सूक्ष्म परमाणुओं (इलेक्ट्रान-इलेक्ट्रान, प्रोजिट्रान-पोजिट्रान या इलेक्ट्रान—पोजिट्रान आदि) के बंधोंको असामान्य कोटिका माना जाता है जिनमें सामान्य बन्धोंकी अपेक्षा पर्याप्त ऊर्जाका विनिमय होता है। इन सूत्रोंको केवल व्यवहार परमाणुओंके बन्धोंका निरूपक माना जाना चाहिये। फिर भी यह तथ्य मनोरञ्जक है कि बन्धकी विभिन्न विधियोंके निरूपणमें शास्त्रोंमें स्कन्धों के कोई भी उदाहरण नहीं दिये गए हैं। लेकिन यह माना जा सकता है कि चूँकि परमाणुके बन्धमें चार धातुएँ या चतुर्भूज स्कन्ध (पृथ्वी, जल, तेज, और वायु) बनते हैं, अतः उन्हें ही इनका स्थूल उदाहरण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

माना जाना चाहिये । इनमें केवल पृथ्वी और जल ही बन्धकी दृष्टिसे महत्त्वपूर्ण हैं । स्कन्धोंके निर्माणकी यह मौलिक प्रक्रिया है । शास्त्रोंमें इसे सामान्य भाषामें भी बताया गया है कि स्कन्ध अपघटन, संघनन एवं अपघटन-संघननकी क्रियाओंसे प्राप्त होते हैं । जैनने इन सभी प्रकारके स्कन्धोंके निर्माणकी दशाओंका भी संक्षेपण किया है ।

जवेरी[४] ने स्कन्धोंके अनेक प्रकारके वर्गीकरणका संक्षेपण किया है । ये बादर (चाक्षुष) और सूक्ष्म (अचाक्षुष) के रूपमें दो प्रकारके होते हैं । प्रयोग-परिणत, विस्रसा-परिणत और मिश्रपरिणतके रूपमें तीन प्रकारके होते हैं । स्कन्ध, स्कन्धदेश, स्कन्धप्रदेश और परमाणुके भेदसे चार प्रकारके होते हैं । यहाँ परमाणु को व्यवहार परमाणु मानना चाहिये । स्थूल-स्थूल (ठोस), स्थूल (द्रव्य), स्थूल-सूक्ष्म (ऊर्जा), सूक्ष्म-स्थूल (गैसीय पदार्थ), सूक्ष्म (कर्मवर्गणाएँ, अतीन्द्रिय) और सूक्ष्म-सूक्ष्म (सूक्ष्मतर स्कन्ध जिनमें वर्तमान परमाणु घटक समाहित किये जा सकते हैं ।) के भेदसे स्कन्ध इस प्रकारके होते हैं । इनमें व्यवहार परमाणुको सूक्ष्मके अन्तर्गत समाहित करना चाहिये । इस वर्गीकरणके विषयमें जैनने बताया है कि यह केवल स्कन्धों की चक्षु एवं अनिन्द्रिय-ग्राह्यता पर आधारित है, उत्तरोत्तर सूक्ष्मता पर नहीं । यही कारण है कि यद्यपि गैसीय अणुओंकी तुलनामें उर्जायें सूक्ष्मतर होती हैं, पर उन्हें गैसोंमें पहले रखा गया है । इस आधार पर सूक्ष्मताकी दृष्टिसे स्कन्ध पाँच प्रकारके ही मानने चाहिये । वस्तुतः ऊर्जायें सूक्ष्म-सूक्ष्म कोटिमें ही आनी चाहिये क्योंकि प्रायः इन्हें चतुस्पर्शी माना जाता है । इस वर्गीकरणमें कुछ स्कन्धोंके नाम आये हैं, पृथ्वी, पत्थर, पर्वत, जल, घी, तेल, आतप, छाया, वायु, कर्मवर्गणायें और सूक्ष्मतर द्व्यणुक एक अन्य वर्गीकरणमें इन्हें तेईस वर्गणाके रूपोंमें बताया गया है । इनके विषयमें विस्तारपूर्वक अध्ययनकी आवश्यकता है । कहीं परिस्थूर न्यायसे स्कन्धके ५३० भेद गिनाये गये हैं । अन्तमें यह बताया गया है कि स्कधोंका विभाजन अत्यंत जटिल है और वे अनन्त प्रकारके होते हैं । इस वर्गीकरणके विविध रूपोंसे यह स्पष्ट प्रतिभास होता है कि ये भेद मात्र सूक्ष्मता और स्थूलताके आधार पर किये गये हैं । इनमें स्कन्धोंकी आन्तरिक संरचना का आधार नहीं है । फिर भी, ये संरचना प्रधान युगके कालके अन्य वर्गीकरणोंसे अधिक सूक्ष्म निरीक्षणको निरूपित करते हैं । यह इस तथ्यसे प्रकट होता हैं कि उस समय ऊर्जाओंको भी स्कन्ध या कणमय माना जाता है ।

स्कन्धोंका निरूपण

यद्यपि घट, पट, वस्त्र, भूषण, खाद्य पदार्थ, दश विकृतियाँ, शरीर, कर्म आदि अनेक स्कन्ध पदार्थों के नाम शास्त्रोंमें आये हैं पर इनका विशेष विवरण उपलब्ध नहीं है । लेकिन चार महाभूतोंके कुछ विवरण कुछ स्थानों पर उपलब्ध हैं जिनका संक्षेपण जैनने किया है । इसके अनुसार यद्यपि प्रारम्भमें यह माना जाता है कि ये महाभूत स्कन्ध विशेषको निरूपित न कर एक-एक जाति विशेषको निरूपित करते हैं, फिर भी उपलब्ध विवरणसे यह प्रमाणित नहीं होता । पृथ्वीके अन्तर्गत ३६–४० ठोस पदार्थोंके नाम अवश्य हैं पर जल, अग्नि, और वायुके अन्तर्गत केवल इनके विभिन्न भेदोंके ही नाम दिये गये हैं । ये भेद श्वेताम्बर आगमों तथा तत्त्वार्थसारमें प्राप्त होते हैं । यह संभव है कि अनन्त संभावित स्कन्धोंमेंसे केवल ये ही स्कन्ध आगमयुगीन समयोंमें दृष्टिगोचर रहे हों । यह आवश्यक है कि आगमिक एवं दार्शनिक साहित्यको स्कन्धों के विवरणके लिये आलोकित किया जाय । साथ ही, यह विवरण नामरूपेण ही है, विशेष विवरण नहीं । इस विषयमें भी छान-बीनकी आवश्यकता है ।

भौतिकी (अ) ऊष्मा और प्रकाश

भौतिकीके अन्तर्गत पदार्थोंके स्थूल उपयोगी भौतिक गुणोंका अध्ययन तो किया ही जाता है, इसके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अतिरिक्त ऊष्मा, प्रकाश आदि विभिन्न प्राकृतिक तथा परमाण्वीय ऊर्जायें भी इसके प्रमुख विषय क्षेत्र हैं। इन ऊर्जाओंका स्रोत क्या है, इनकी प्रकृति और कार्य क्या है, क्या इन्हें उपयोगी कार्योंमें प्रयुक्त किया जा सकता है, ये और अन्य प्रश्न ही विद्वानोंको इन ऊर्जाओंकी मौलिक प्रकृतिके अध्ययनके प्रति प्रेरित करते हैं। प्राचीन समयमें इन ऊर्जाओं व पदार्थके उपयोगी गुणों पर विचार किया गया है। विभिन्न दर्शनोंके साथ-साथ जैन आगमोंमें भी इन पर स्फुट चर्चायें प्राप्त होती हैं जो कुछ ईसा-पूर्व सदियोंसे लेकर बारहवीं सदीके बीच लिखे गये हैं।

भौतिकीसे सम्बन्धित विषयों पर अनेक विद्वानोंका ध्यान गया है। सम्भवतः सर्व प्रथम जैनने तत्त्वार्थसूत्रके पंचम अध्यायकी टीकामें इन विषयों पर १९४२ में विचार किया था। इसके बाद अनेक स्फुट विषयों पर अमर, सिकदर, पालीवाल, मुनि महेन्द्र कुमार द्वितीय और अन्योंने आगमोक्त मन्तव्योंका तुलनात्मक विवरण प्रस्तुत किया है। पिछले कुछ वर्षोंमें जैन[13] ने अपने पाँच शोध पत्रोंमें इस विषय पर विस्तारसे प्रकाश डाला है। अपने पदार्थोंके गुणोंके संक्षिप्त अध्ययनमें उन्होंने बताया है कि जैन आगमोंमें पदार्थोंके स्थूल गुणोंकी बहुत कम चर्चा है। वैशेषिक इस विषयमें जैनोंसे कुछ अधिक यथार्थवादी हैं। जैन[13] ने अनेक वैज्ञानिक उद्धरणोंके आधार पर प्रमाणित किया है कि ताप, प्रकाश आदि ऊर्जाएँ भारयुक्त होती हैं। यद्यपि उत्तराध्ययनमें पदार्थके अनेक रूपोंमें प्रभा (प्रकाश) को समाहित किया गया है, फिर भी तत्त्वार्थसूत्रमें उसे छोड़ दिया गया है। हाँ, यहाँ छाया, अन्धकार और उद्योतके रूपमें प्रकाशकी विविधता बताई गई है। अतः यह अचरजकी बात है कि प्रभाको पुद्गलके रूपोंमें क्यों सम्मिलित नहीं किया गया। यह अन्वेषणीय है। फिर भी, यह माना जाता है कि प्रकाशकी अनेक शक्तियाँ होती हैं जिनमें दृश्य प्रकाश भी एक है। ऐसा प्रतीत होता है कि पुद्गलके आतप रूपमें ऊष्मा एवं दृश्य प्रकाशको एक साथ समाहित किया गया है। आगमें तपाये हुये गरम लोहेमें अग्नि या ऊष्माके अचेतन परमाणु प्रविष्ट होकर उसे रक्ततप्त कर देते हैं। प्रकार ऊष्मा ही प्रकाश ऊर्जामें रूपान्तरित होती है। अदृश्य प्रकाशको ऊष्मा कहा जा सकता है। पदार्थोंके कणोंमें उष्णता या प्रकाशकी शक्ति आत्मा या अदृश्य जैवशक्तिके संयोगका फल है। इनके अभिभव और पराभवके कारण इन दोनों ही ऊर्जाके रूपोंको परमाणुमय बताया गया है। शास्त्रोंमें ताप और प्रकाशके सारणी–१ में दिये गये अभिलक्षण बताये गये हैं।

सारणी–१. उष्मा और प्रकाश के शास्त्रोक्त अभिलक्षण

	ताप या ऊष्मा के अभिलक्षण	प्रकाश के अभिलक्षण
१.	ऊष्मा तेजसकायिक जीव हैं इसमें अदृश्य शक्तिके कारण सजीवता है। यह एक ऊर्जा है।	प्रकाश भी तेजसकायिक है। इसमें अदृश्य शक्तिके कारण सजीवता है। यह एक ऊर्जा है।
२.	इसकी प्रकृति कणमय होती है इसके कण अनेक सूक्ष्म परमाणुओंसे बने होते हैं।	इसकी प्रकृति भी कणमय होती है।
३.	ऊष्मा पदार्थों को गरम करती है, पकाती है, नष्ट करती है।	प्रकाश कणोंका अभिभव और पराभव होता है।
४.	ऊष्मा पदार्थोंमें अवशोषित हो जाती है। यह जीवनका एक लक्षण है।	यह दो प्रकारके स्रोतोंसे मिलता है—ठंडा और गरम। यह आतप और उद्योत—दो रूपोंमें पाया जाता है।
५.	प्रकाश, विद्युत और मणिप्रभा ऊष्माके ही रूप हैं।	

जैनने बताया है कि वर्तमानमें ऊष्मा या प्रकाश एक ऊर्जाके रूपमें माने जाते हैं। इनकी प्रकृति

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्विविधा-तरंगणी होती है। इनकी ऊर्जा प्राकृतिक होती है, किसी अदृश्य शक्तिके कारण नहीं। तरंगात्मक दृष्टिसे ऊष्माका तरंगदैर्ध्य रक्तप्रकाशसे बृहत्तर होता है। ऊष्माके विभिन्न कार्य आज भी मान्य हैं। पर ऊष्माका संप्रसारण अब संचालनके अतिरिक्त दो अन्य विधियोंसे-विकरण और संवाहनसे-भी माना जाता है। शास्त्रोंमें प्रावस्था परिवर्तन और ऊष्माके यांत्रिक कार्योंमें परिवर्तित होनेकी चर्चा नहीं है। ये प्रकरण उन्नीसवीं सदीकी वैज्ञानिक प्रगति की ही देन हैं। उष्माको जीवनका लक्षण मानना एक समस्या उत्पन्न करता है क्योंकि जगतके प्रत्येक तंत्रमें प्रकृत्या ही कुछ न कुछ ऊष्मीय ऊर्जा होती है। इस दृष्टिसे संसारके सभी पदार्थ, चाहे वे जड़ हों या चेतन, सजीव ही माने जाने चाहिये। वस्तुतः उत्तराध्ययनमें यह बताया गया है कि पृथ्वी, जल आदि प्राकृतिक रूपमें शस्त्र अनुपहत होते हैं और सजीव होते हैं। विक्षोभ या उपघात इन्हें निर्जीव बनाता है। मूलतः प्रत्येक पदार्थके सजीव माननेकी इस धारणासे क्या यह अर्थ लिया जाय कि जगतमें जीव और अजीवकी धारणाका विकास उत्तर आगमकालमें हुआ है? पदार्थोंके मूलतः सजीव होनेकी धारणा जैन दर्शनको वेदान्तका ही एक अंग बना देती? यह एक ऐसा प्रश्न है जिसपर गम्भीर एवं शोधपूर्ण अध्ययनकी आवश्यकता है।

एक अन्य महत्त्वपूर्ण प्रश्न भी यहाँ समाधानकी अपेक्षा रखता है। जीवाभिगमसूत्रमें तेजसकायिकोंको त्रस कोटिमें माना गया है जबकि उमास्वातिने इसे स्थावर माना है। तेजसकायिकोंका स्थावरीकरण कब और कैसे हुआ, यह भी एक विचारणीय बात है। प्रारम्भमें, गतिशीलोंको त्रस मान कर वायु, तेज (ऊष्मा, प्रकाश आदि) को इस कोटिमें रखा गखा गया हो। लेकिन जब कर्मवादका विकास हुआ, तब "त्रस" की परिभाषामें कुछ संशोधन किया गया प्रतीत होता है। इससे क्या यह समझा जाय कि जीवाभिगम सूत्रके समय कर्मवाद विकसित नहीं था और शब्दोंका सामान्य अर्थ लिया जाता था?

दशवैकालिकमें तेजसकायिकोंके सात भेद गिनाये गये हैं जबकि प्रज्ञापनामें सूक्ष्म तेजसकायिकोंके अतिरिक्त स्थूल तेजसकायिकोंके बारह भेद बताये गये हैं। [सारणी-२] इनमें अग्निकी ज्वाला, मुर्मुर,

सारणी-२. तेजस्कायिकोंके भेद

प्रज्ञापना	दशवैकालिक
१. विद्युत्	२. अग्नि या ज्वाला
२. अशनि	३. मुर्मुर
३. निर्घात	४. अर्चि
४. संघर्ष	५. अलात
५. सूर्यकान्त	६. शुद्ध अग्नि
७. भेद [दशवै०]	७. उल्का

अंगार, आलात, अर्चि, संघर्षज ऊष्माओंसे सामान्य जन परिचित हैं। शुद्ध अग्निको ईंधन रहित अग्निके रूपमें माना जाता है। यह वैद्युत भट्टी, पिघला हुआ लोहपिंड आदिमें देखा जाता है। उल्का, विद्युत् एवं अशनि—ये विद्युतके रूप हैं और सूर्यकान्त या मणियोंके माध्यमसे उत्पन्न ऊष्मा प्रकाशका एक प्रभाव है जिसमें प्रकाश ऊष्मामें परिवर्तित होता है। निर्घात विक्रिया जन्य अग्नि है। तैजस्कायिकोंके इस वर्गीकरणसे पता चलता है कि शास्त्रीय कालमें ऊष्मा, प्रकाश और विद्युत एक ही कोटि—तैजस्कायिकके माने जाते थे और इनकी प्रकृति कणमय मानी जाती थी। यह भी यहाँ दृष्टव्य है कि उपरोक्त सभी रूपोंमें मूल कुछ भी हो, ऊष्मागुण इन सभीमें पाया जाता है। अतः इन ऊर्जाओंकी प्रकृतिमें मौलिक भेद होनेके

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बावजूद भी इनके स्थूल एवं अनुभवगम्य ऊष्मागुणके कारण इन्हें एक ही तेजोरूपमें समाहित किया गया है। इस युगमें प्रभा [सूर्य और दीप प्रकाश], उद्योत एवं अन्धकारमें उष्णताके सामान्य अनुभवगम्य न होनेसे इन्हें तैजस्कायिकोंमें समाहित नहीं किया गया है जबकि इन्हें भी इसमें समाहित किया जा सकता था। सम्भवतः इसीलिये प्रभा आदि तीन रूप तैजस्कायिक नहीं बताये गये हैं। फलतः ये निर्जीव हैं। फिर भी, उन्हें पौद्गलिक और कणमय तो माना ही गया है। आधुनिक दृष्टि से इन भेदोंके विषयमें यह कहा जा सकता है कि ये ऊष्मा, प्रकाश या विद्युत् ऊर्जाओंके विभिन्न स्रोत हैं स्वयं ऊर्जाएँ नहीं हैं। ऊष्मा चाहे किसी भी स्रोतसे क्यों न उत्पन्न हो, ऊष्माकी प्रकृति एकसमान होगी, विभिन्न विद्युत् स्रोतोंसे उत्पन्न विद्युत् ऊर्जाकी प्रकृति एकसमान होगी। इसी प्रकार प्रकाशके विषयमें मानना चाहिये।

इन ऊर्जाओंकी कणमयताकी धारणा जैन और वैशेषिकोंमें समानरूपसे पाई जाती है। न्यूटन युगमें वैज्ञानिक भी इन्हें तरल या कणमय मानते थे। यह तो उन्नीसवीं सदीके उत्तरार्द्धमें ही मत स्थिर हुआ कि ये तरंगात्मक ऊर्जाएँ हैं। बीसवीं सदीमें इन्हें तरंगणी प्रकृतिका सिद्ध किया जा चुका है। अतः इनकी शुद्ध कणमयताकी शास्त्रोक्त धारणा अब संशोधनीय बन गई है।

प्रकाश-सम्बन्धी कुछ घटनाएँ

प्रकाशके विषयमें जैन[13] ने दो शास्त्रीय प्रकरणों पर और ध्यान आकृष्ट किया है जो वर्तमान परिप्रेक्ष्यमें विचारणीय बन गये हैं। प्रथम प्रकरणमें चक्षु द्वारा पदार्थके देखनेकी प्रक्रिया समाहित है। शास्त्रीय मान्यताके अनुसार चक्षु पदार्थोंके रूप एवं आकार आदिका ज्ञान करानेमें आलोक या सूर्यप्रकाशकी सहायता नहीं लेती। अमर और जैनने चक्षु द्वारा पदार्थोंके देखने और ज्ञान करानेकी वैज्ञानिक प्रक्रियाका विवरण देते हुये बताया है कि सामान्य जनको दृश्य परिसरके प्रकाशके बिना पदार्थ दृष्टिगोचर नहीं होते। जैन दार्शनिक सूर्यकी किरणें मान कर भी उन्हें दर्शन प्रक्रियामें उपयोगी नहीं मानते। वस्तुतः चक्षुका पदार्थ सम्पर्क किरणोंके माध्यमसे ही होता है। जैसे कैमरा बिना पदार्थ और प्रकाशके चित्र नहीं खींच सकता, वैसे आँख भी इन दोनोंके बिना रूपज्ञान नहीं करा सकती। यह सही है कि आँख पदार्थके पास जाकर उसका ज्ञान नहीं कराती, इसलिये उसका अप्राप्यकारित्व स्थूलतः सही हो सकता है लेकिन चक्षु किरणों के माध्यमसे पदार्थके बिना भी उसका बोध नहीं करा सकती, अतः उसका पदार्थसे किसी न किसी प्रकार सम्पर्क होता ही है। अतः अप्राप्यकारित्वको परोक्ष प्राप्यकारित्व या ईषत् प्राप्यकारित्वके रूपमें लेना शास्त्रीय अर्थको वैज्ञानिक बना देगा, यह सुझाया गया है।

इसी प्रकार द्वितीय प्रकरणमें अन्धकार, छाया और वर्षाकी चर्चा है। अन्धकार तो प्रकाशका ही एक रूप है जिसका परिसर दृश्य परिसरसे भिन्न होता है। उल्लूकी आँखोंका लेंस और विविध प्रकारके नवीन केमरे प्रकाशके इसी परिसरमें काम करते हैं। चूँकि यह प्रकाशका ही एक रूप है, अतः अन्धकारकी कणमयता भी स्पष्ट है। लेकिन इसे प्रकाशविरोधी कहना स्थूल निरीक्षण ही कहा जा सकता है। यह बताया गया है कि छाया प्रकाशको रोकनेवाले पदार्थोंसे बनती है। इसकी प्रकृति परावर्तक तलोंकी प्रकृति पर निर्भर करती है। यह भी पुद्गलका ही एक रूप है। वस्तुतः वर्णादिविकार परिणत छाया (दर्पण प्रतिबिम्ब या छाया) अवास्तविक प्रतिबिम्बका एक रूप है जबकी अबतक लेंससे बने प्रतिबिम्ब वास्तविक होते हैं। वास्तविक प्रतिबिम्बोंका उदाहरण शास्त्रोंमें नहीं मिलता, शायद उस युगमें अवतल लेंसोंकी जानकारी न हो। साथ ही, हरिभद्रने जिन छाया पुद्गलोंका दर्पणमें प्रवेश बताया है, वे वस्तुतः प्रकाश किरणें हैं। इन किरणोंके सरल पथ गमनकी प्रवृत्तिके कारण ही छाया और प्रतिबिम्ब बनते हैं। प्रकाशकी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस सरल पथगमनकी प्रकृतिका भी शास्त्रोंमें उल्लेख नहीं मिलता। इस प्रकार छाया, अन्धकारके विपरित प्रकाशका एक प्रभाव है, स्वयं प्रकाश नहीं।

मुनि महेन्द्र कुमार द्वितीयने बताया है कि पदार्थोंके वर्णकी अनुभूति एक जटिल प्रक्रिया है जिसमें वस्तु और ज्ञाता—दोनों सम्मिलित होते हैं। शास्त्रोंमें वर्णित पंचवर्णोंकी बात काफी स्थुल लगती है क्योंकि इन्द्रधनुषमें ही सात रंग होते हैं। यदि मौलिक वर्णोंकी बात की जाय, तो रामनके मूलभूत अन्वेषणसे तीन ही मौलिक वर्ण प्रकट होते हैं। इस प्रकार अन्धकार, छाया और वर्ण सम्बन्धी आगमयुगीन मान्यतायें अपनी समीचीनता बनाये रखनेके लिये पुनः परीक्षणकी अपेक्षा रखती हैं। इस प्रकार, ऊष्मा और प्रकाशके सम्बन्धमें हमें आजकी तुलनामें पर्याप्त अल्प सूचनायें ही मिलती हैं। फिर भी, इनका स्फुट संकलन भी आगम युगकी महान् देन है। इससे उनके प्रकृति-निरीक्षण सामर्थ्य और बौद्धिक विचारणाकी तीक्ष्णताका पता चलता है। ये संकलन या विचार आजके युगमें कैसे भी क्यों न हों, अपने युगमें तो उत्तम कोटिके रहे हैं क्योंकि ऐसा विवरण अन्य दर्शनोंमें नहीं पाया जाता।

विद्युत् और चुम्बकत्व

ऊष्मा, प्रकाश और ध्वनिकी तुलनामें शास्त्रोंमें विद्युत् और चुम्बकीय ऊर्जाओंके विषयमें उपलब्ध विवरण और भी अल्प हैं। शास्त्रोंमें विद्युत् उल्का, अशनिके रूपमें विद्युत्का उल्लेख है, पर वस्तुतः ये सभी विद्युत्के उत्पादक हैं, विद्युत् नहीं। विद्युत् तो अतिगतिशील इलेक्ट्रान प्रवाहको कहा जाता है। यह सही है कि यह कणमय रही है। पर अब इसे भी तरंगणिक प्रमाणित कर दिया गया है। विद्युत्को स्निग्ध-रूक्षके समान विरोधी गुणोंके सम्पर्कसे उत्पन्न मानना जैन दार्शनिकोंकी ईसापूर्व सदियोंमें बड़ी सूक्ष्म कल्पना है जिसे वैज्ञानिक अठारहवीं सदीमें ही खोज सके। शास्त्रोंमें विद्युत्को तेजस्कायिकोंके रूपमें माननेके कारण सजीव माना गया है। इसकी गतिके ऊष्मा भी इसे सजीवता देती है, पर यह मत विज्ञानको मान्य नहीं है। जीवनके जन्म, वृद्धि, पुनर्जनन व विनाशके लक्षण इसमें नहीं पाये जाते। शास्त्रोंमें प्रकाशके ऊष्मा या विद्युत्में रूपान्तरणकी बात आई है पर विद्युत्के ऊष्मामें रूपान्तरणका कोई उदाहरण नहीं है। सम्भवतः उस युगमें चालक और रोधक पदार्थोंके सम्बन्धमें दृष्टि नहीं गई, अतः यह विषय छूट ही गया। आज हम जानते हैं कि विद्युत्के ऊष्णीय रूपान्तरण हमारे लिये कितने उपयोगी हैं।

चुम्बकत्वके विषयमें तो केवल अयस्कान्तका नाम आता है। शास्त्रोंमें इसे ऊर्जाका रूप ही नहीं माना जाता (हाँ, इसके लोहेके आकर्षण गुणोंको अप्राप्यकारिताका साधक मानकर इससे चक्षुके आप्राप्य-कारित्व गुणका संपोषण अवश्य किया गया है) शास्त्रोंमें केवल एक ही प्राकृतिक चुम्बकका नाम है। इसके विपर्यासमें, अब चुम्बकत्व एक ऊर्जा है जो तरंगणी होती है। इसके चारों ओर बलरेखायें रहती हैं जो वस्तुओंको आकर्षित करती हैं। आवृत वस्तुओंमें से बलरेखायें पार नहीं हो पातीं, अतः वे आकृष्ट नहीं हो पातीं। यह गुण कुछ वस्तुओंमें उनकी विशिष्ट अणुरचना और विन्यासके कारण पाया जाता है। कुछ वस्तुओंमें यह गुण कृत्रिमतः भी उत्पन्न किया जा सकता है। अपनी चक्षुषा अगोचर बल-रेखाओंके माध्यम से ही अयस्कान्त लोहेको आकर्षित करता है। अतः अयस्कान्तको अप्राप्यकारी ग्राहक नहीं माना जा सकता। इसे चक्षुके समान ही परोक्ष प्राप्यकारी या ईषत् प्राप्यकारी मानना चाहिये।

विद्युत् और चुम्बकत्व तथा उससे सम्बन्धित घटनाओंकी शास्त्रोंमें अल्प विवरणिका इस तथ्यका संकेत है कि आगम या शास्त्रीय युगमें इन ऊर्जाओंका कोई विशेष उपयोग अन्वेषित नहीं था। प्राकृतिक रूपमें पाये जानेके कारण केवल इनके स्थूल गुणोंका ही अवलोकन किया गया था।

ध्वनि—जैन, सिद्धान्तशास्त्री, सिकदर, मेहता और रामपुरिया आदिने ध्वनिके सम्बन्धमें जैन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मान्यताओंका विवरण एवं समीक्षण किया है। इन सभीने पौद्गलिक शब्दको वर्तमान ध्वनिका पर्यायवाची माना है। शास्त्रीय मान्यताके अनुसार, ध्वनि भी प्रकाश आदिके समान एक पौद्गलिक ऊर्जा है, पर यह तेजस्कायिक न होनेसे अजीव मानी जाती है। इसकी उत्पत्ति परमाणुमय पदार्थोंके विशिष्ट गतिके कम्पन और संघटनसे होती है। पौद्गलिक होनेसे इसमें स्पर्शादि चार गुण पाये जाते हैं। इसका आकार बज्रके समान होता है। यह हवामें संचारित होती है। यह लोकान्त तक जा सकती है। ध्वनिमें तीव्रता, मंदता, अभिभव, पराभव, व्यतिकरण आदिके गुण पाये जाते हैं। ये इसकी कणमयताको पुष्ट करते हैं। इसीलिये ध्वनिको शब्दसे व्यंजित कर उसे भाषावर्णात्मक पुद्गल बताया गया है। जो सूक्ष्म-स्थूल कोटिके स्कन्धोंमें समाहित की गई है। जैन ध्वनिको द्रव्यदृष्टिसे नित्य तथा पर्यायदृष्टिसे अनित्य मानते हैं। इस दृष्टिसे जैन मीमांसकोंके शब्द नित्यत्ववादको नहीं मानते। उन्होंने इसमें अनेक व्यावहारिक आपत्तियाँ प्रस्तुत की हैं जो उनके ध्वनि-विषयक सूक्ष्म निरीक्षण व विचारके परिमाण ही मानने चाहिये। जैन न्याय-वैशेषिकोंके शब्दोंके अमूर्तवाद एवं आकाश गुणसे भी सहमत नहीं हैं क्योंकि इससे शब्दमें नित्यत्व मानना पड़ता है। हाँ, यदि आकाशको ध्वनि संचारण माध्यम मान लिया जाय, तो शब्दके वीचीतरंगन्याय या कदम्ब-कोरक प्रक्रियासे श्रवणकी प्रक्रिया तर्कसंगत हो जाती है। फिर भी, आकाशको ध्वनि-उत्पादक नहीं माना जा सकता, वह तो केवल संचरण माध्यम है।

प्रज्ञापना, स्थानांग, भगवती एवं तत्त्वार्थसूत्रके टीकाग्रन्थोंके आधार पर शब्दोंको विविधप्रकारसे वर्गीकृत किया गया है। प्रारम्भिक वर्गीकरणका नवपदार्थमें संक्षेपण किया गया है। उत्तरवर्ती कालोंमें इसमें किंचित् परिवर्तित हुआ है। इस संक्षेपणसे पता चलता है कि ध्वनिके सस्वर और कोलाहल रूपमें दो वैज्ञानिक भेदोंकी तुलनामें जैन शास्त्रीय वर्गीकरण अधिक व्यापक सूक्ष्मनिरीक्षणकी दृष्टि प्रकट करता है। विज्ञानमें मानवकी शब्दात्मक भाषाके लिये कोई पृथक् स्थान नहीं दिया गया है। इसे योग्यतानुसार दोनों ही कोटियोंके रूपमें वर्णित किया जा सकता है। सिकदर इसे कोलाहल मानते हैं जो तथ्य नहीं है। इसी प्रकार प्राकृतिक ध्वनियोंकी बात है। शास्त्रोंमें इनका विशद विवेचन और वर्गीकरण किया गया है। यही नहीं, वहाँ द्रव्यभाषाके अतिरिक्त भाव भाषा भी वर्णित है। द्रव्य भाषा ग्रहण, निःसरण तथा परघात (संघट्टन) से उत्पन्न होती है। भावभाषा मानसिक है। परघात भाषा प्रयोजन्य होती है और वह सरल या वक्रगतिसे चलती है। यह वायुमें संचारित होती है और लोकान्त तक जाती है। भाषात्मक ध्वनि दो समयोंमें अभिव्यक्त होती है। इस प्रकार ध्वनिके उत्पादन, संचारण, प्रकृति, गुण और वर्गीकरण-सम्बन्धी शास्त्रीय मान्यताएँ प्रर्याप्त तथ्यपूर्ण हैं लेकिन इनकी व्याख्यामें आजकी दृष्टिसे पर्याप्त अन्तराल है। इसके अतिरिक्त, जैन[13] ने बताया है कि ध्वनिरोधन, ठोसोंमें ध्वनि-संचरण तथा ध्वनिका अन्य ऊर्जाओंमें अन्योन्य रूपान्तरण आदि अनेक आधुनिक तथ्य ऐसे हैं जिनका शास्त्रोंमें विवरण उपलब्ध नहीं होता।

आधुनिक वैज्ञानिक मान्यताके अनुसार, ध्वनि गतिक ऊर्जाका एक रूप है। यद्यपि ऊर्जाओंकी चरम कणमयता निर्विवाद मान ली गई है, फिर भी ऊर्जा और दृश्यकणोंमें कुछ अन्तर तो स्पष्ट है। इस अन्तरके कारण ही वैशेषिक ध्वनिको अमूर्त एवं सांख्य तन्मात्रात्मक मानते हैं। ध्वनिके जिन गुणोंके आधार पर जैन उसे कणमय प्रमाणित करते हैं, उन्हीं गुणोंके आधार पर वैज्ञानिक उसे तरंगात्मक या ऊर्जात्मक प्रमाणित करते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि जैन दार्शनिकोंने शब्द उत्पत्तिके स्रोत व माध्यमकी पौद्गलिकताको ध्वनिकी प्रकृति पर आरोपित कर दिया है। यदि ध्वनिको कणात्मक माना भी जाय, तो उसके कण इतने सूक्ष्म होंगे कि वे परस्परमें प्रत्यास्थ संघट्टन करेंगे जिनसे ध्वनि उत्पन्न ही न कर सकेंगे। इस प्रकार वर्तमान वैज्ञानिक ध्वनिके प्रायः सभी आगमवर्णित गुणोंको मानते हैं पर उनकी व्याख्या शास्त्रीय व्याख्यासे भिन्न प्रतीत होती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उपरोक्त निरूपणसे प्रकट होता है कि जैन आगम एवं दार्शनिक साहित्यमें भौतिकीसे सम्बन्धित तथ्यभी स्फुटरूपमें पर्याप्त मात्रामें वर्णित हैं। अब तक उनका स्फुट रूपमें ही समीक्षण या विवरण लेखकोंने किया है। इस बातकी महती आवश्यकता है कि विषयवार वर्णनोंका गहन अध्ययन कर संकलन किया जाय और तब उनका तुलनात्मक समीक्षण किया जाय।

सन्दर्भ-ग्रन्थ और शोध-पत्र

१. जैन, नन्दलाल, (१) केमिस्ट्री आफ जैनाज "कीमिया" ११, १९६६
(२) जैन आगमोमें रसायन विज्ञान, १–४, जिनवाणी, १९७३
(३) जैन दर्शनमें जड़ जगत्की रूपरेखा, महावीर-स्मृति-ग्रन्थ, १९५३
(४) जैन परमाणुवाद, जैन विद्यालय, सीकर-स्मारिका (प्रेसमें)
(५) केमिकल कन्टेन्ट आव जैन कैनन्स, अनुसन्धान-पत्रिका, १९७४

२. जैन, दुलीचन्द, जैनदर्शनमें पुद्गलद्रव्य और परमाणु-सिद्धान्त, चन्दाबाई अभिनन्दन-ग्रन्थ, आरा, १९५४

३. मुनि नगराज, जैनदर्शन और आधुनिक विज्ञान, आत्माराम ऐण्ड सन्स, दिल्ली, १९५९

४. जवेरी, जे० एस०, थ्योरी आव एटम्स इन जैन फिलोसोफी, जैन विश्वभारती, १९७५

५. बांठिया, एम० एल०, जैन पदार्थ विज्ञानमें पुद्गल, श्वे० तेरापंथी महासभा, कलकत्ता, १९६१

६. जैन, जी० आर, कोस्मोलोजी, ओल्ड एण्ड नीड, भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, १९७५

७. सिकदर, जे० सी०, एटामिक थ्योरी आव जैनाज, इण्डियन जर्नल आव हिस्ट्री आव साइंस, १९७९

८. रे, पी०, हिस्ट्री आव केमिस्ट्री इन एन्सियन्ट एण्ड मेडीवल इण्डिया, पूर्वोक्त, १९६६

९. अमर, गोपीलाल, चक्षुकी अप्राप्यकारिता, एक मूल्यांकन; वरैया अभिनन्दन-ग्रन्थ, काशी, १९५४

१०. सिंह, वीरेन्द्र, द्रव्यविषयक जैन धारणा, जैनधर्म आधुनिक सन्दर्भमें (सं० नरेन्द्र भानावत आदि), जयपुर, १९७५

११. सिकदर, जे० सी०, जैन थ्योरी आव साउंड, रिसर्च जर्नल आव फिलासफी, १९७२

१२. पालीवाल, के० एल०, मीमांसा और जैनदर्शनमें द्रव्यका स्वरूप, अनुसन्धान-पत्रिका, ५, १९७६

१३. जैन, एन० एल०, (अ) प्रोपर्टीज आव मैटर इन जैन कैनन्स, इस पुस्तकका विज्ञानखण्ड, १९८०
(ब) फिजिकलकन्टेन्ट्स आव जैन कैनन्स, दिवाकर-अभिनन्दन-ग्रन्थ, १९७६
(स) जैन आगमोंमें भौतिकीके तत्त्व (३), मगध विश्वविद्यालय सेमिनार, बोधगया, १९७५
(द) फिजिकलकन्टेन्ट्स आव जैन कैनन्स (४), प्रेसमें

१४. गेलरा, एम० आर०, कन्सेप्ट आव मासलेन्स मैटर इन जैन लिटरेचर, अनुसन्धानपत्रिका, ५, १९७५

१५. मुनि महेन्द्रकुमार द्वितीय, जैन परमाणुवाद, दिवाकर अभिनन्दन-ग्रन्थ, १९७६

१६. जैन, उत्तमचन्द, 'जैनदर्शनका तात्त्विक पक्ष : परमाणुवाद', जैनदर्शन और संस्कृति-आधुनिक सन्दर्भमें, लेखांक ४, इन्दौर विश्वविद्यालय, इन्दौर, १९७६

१७. जैन, एल० सी०, जैन थ्योरी आव आल्टीमेट पार्टीकल्स, वही, लेखांक ५, इन्दौर, १९७६

●

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org